

मैथिली-धूर्तसमागम

भाषा: (समोप संस्कृतभाषा) — [ श्री १३ क ]

नो जानाति कुलीनमुत्तमगुणं सत्त्वान्वितं धार्मिकं  
नाचारप्रवणं न कार्यकुशलं न प्रज्ञयालङ्कृतं ।  
मीलं क्रूरमपेतसत्त्वसद्बुद्धयं वरमादियं सेवते  
तस्य सानुगुणः पयोधिसुतया लक्ष्म्या प्रमाणीकृतः ॥

अरे गण्डपरलोआ दुदुदम्भणा ईदिसे  
दूसहमज्जसहे पठमं तुमं महाधरां मेखिखअ कुदो अण-  
दो गदुअ अम्हेहिं मिक्खा पत्थिदव्वा ।



॥ विमानरागे ॥

न लई अधिक तरुण म(ओ<sup>१</sup>)क्ष रे ।  
 एखने दमर मसन नहि दूरे ॥ ध्रुवं ॥  
 दिवस क × × (१८वां) अतिथि (१५)जे सोरा ॥  
 चिन्तहि धनिक स (१९) भोग्य(१६) मोरा ॥  
 भगव देखि [१३ख] असङ्गार पुस्तके ॥  
 कविमोवर जौतिक एहु गावे ॥  
 भुवाङ्गारः—भगवन् ! अस्मद्वानोत्तरे सुरतप्रिया  
 नाम सासोपवासिनीति तत्र गम्यतां ।

(इत्यभिवाद्य सत्वरं निष्क्रान्तः ।)

विश्वनागः—वत्स ! यद्येवं तत्समीहितमेव सम्भव । तदेहि  
 तत्रैव मच्छ्राव ।

(इति परिक्रान्तः ।)

स्नातकः (पुरोऽवलीक्य गन्धमाधाय च) —अथर्वं प्रेक्ष्य  
 एकहिंसापुत्रकमेतिव आर्त्तपुत्रमहाहन्तं कुटुम्बपरिभ-  
 लुमासौ अगमिष्यममकादौषं सेवेदि । ता एव  
 ज्येव सुरतप्रियाण वासमवनं तत्केशि

१—ई अक्षर काटल छेक ।

विश्वनागः—विदग्धैव किल सासोपवासिनी किञ्चिदन्ती  
 तदाम[१४क<sup>१</sup>]ञ्छोपसर्पाव

(इत्येकान्ते स्थितौ ॥)

(सतः प्रथित्यति सुस्तप्रिया)

॥ शाल(सार<sup>१</sup>)ङ्गीरामे ॥ पण्डितवासे ॥

अहलि हे (रे<sup>२</sup>) मम वासी-  
 परधना प्रस्थि स्थापि निवासी ॥ ध्रुवं ॥  
 कुश कनकलु पड़ा सौख ।  
 काकन वाह मरा रुद्राल ।  
 चौन्दन वेन्दा लाई लुल्लाट ।  
 पथिक उवाधि बैसाले वार ॥  
 चारव आहर धरम भोख ।  
 मुख समर्थ सबहि सोख ॥  
 सुनिजं सुरतप्रिया रीति ।  
 हसई सिरि गणेशर मन्ति ।

१—एहि स्थलसँ नेपालक पुस्तकालयमे जे संस्कृत-पूर्वसमागम छैक  
 तकर प्र० ६(अ) आरम्भ छि ।

२—दे अक्षर काटल छेक ।



धम्मो ण इडा(१६०)<sup>१</sup> बहुदुखलचेष्टो(१६०)<sup>२</sup>  
 मोहेण(१६०)<sup>३</sup> सोख्खं सम अत्थि सव्वं(१६०)<sup>४</sup> ।  
 अत्थो समत्थो सव्वं(१६०)<sup>५</sup> विधावं(१६०)<sup>६</sup>  
 अण्(१६०)<sup>७</sup> इत्यन्वसकलाणिहार्यं ॥

रनातकः—(उपसृत्त) । अज्जे एही भअवं विस्सणअरो  
 तुम्हाणं अदिधी(उ)अत्थिदो ।

सुरतप्रिया (परिक्रम्यावलोक्य च) —कथं भअवन्ता उअस्स-  
 प्पामि (उपसृत्त) भअवं(न<sup>२</sup>) पणमामि ।

विश्वनगरः (सप्तमी) —अभिलषितभाजनं भूयाः ।

सुरतप्रिया —भअवं तुम्हाणं प<sup>४</sup>साएय

विश्वनगरः —एवमचिरादस्तु

सुरतप्रिया —आणवेदु भअवं जं मए कादव्वं दाअव्वअ

विश्वनगरः —शुभे किमस्माकमदेयं भवत्या । सांप्रतं भिच्छे-  
 (चै?)व तावत्

१—ई पाठ संस्कृत वृत्तसमागमकेर धिक ।

२—एतए एकटा कोनो अक्षर के पड़ल नहि भेल, काटल छैक  
 मायः ओ “लो” छैक ।

३—ई अक्षर काटल छैक ।

४—“प” अक्षर काटि क “व” चढ़ाओल छैक ।

सुरतप्रिया—भअवं<sup>१</sup> कीदिसी भिक्का कीदिसीए बेलाए  
 केत्तिआई ते अणाजि ।

विश्वनगरः (सप्तमी) —भूयतां<sup>२</sup>

भांसं<sup>३</sup> माप<sup>४</sup> [१५क] पटोलतकवटिकावास्तुकशाकं वटः  
 सखीवन्यथ सुदृगमत्स्यविदलभायः प्रकारोत्करः ।  
 स्वादिष्टं च पयोधृतं दधि नवं रम्भाकलं शक्करा  
 रत्नेपादिति लाभ्यतां सुवदने भिक्षा मदीया द्रुतं ॥

नरातीरागे । एकतालीताले ।

मिथिआ भोरि करव रे ।

सुवदनि मिथिआ भोरि करव रे आ ॥ ध्रुवं ॥

मासु माछ बल वटिका सांजवि

सव(१) सुनि माग परोले आ ।

सुदृग दितले परकार कर<sup>४</sup>व

सवे सझिनि कहज थोले आ ।

१—ई शब्द संस्कृते दोधीमे छैक ।

२—नीचामे शोचिके “मांस” लिखल छैक ।

३—एहिठाम “मापय” पाठ छलैक ।

४—एकटा “र” लिखिके काटल छैक ।



तहि दिन जनमाशोल दहि  
सुनु सत्वर सोन्य दूध दह घीवे ।  
केरा सज्जि रस वेवा(१) युयुताओव  
कविशे[१५क]पर जोतिक एहु<sup>२</sup> नावे ॥

हुरतागिया ॥ (विद्वज्ज स्वगतं)—एसो महण्वा अप्पविसज्ज-  
णजोग्गो ज्जेव देवसस पवाएल ससपयखो ।  
(प्रकाशं अस्मिन् वयम्)

एदं भु(१५<sup>३</sup>)रीरं विरहेण जुत्तं ।  
पाया<sup>२</sup> तहा अय्यफलेकतारा ।  
सत्तं सुदाअपमृदारकित्ति ।  
का बाहिरे वत्थुनि आरिय अत्था ॥

ताव अन्तरधरं पवित्तिय वीरसीअदु भअव<sup>३</sup> ।  
अई उअ भिकखापधरं कतोमि ।

रत्तावकः (सोस्ताह<sup>३</sup>)—मअव<sup>३</sup> पेम्मेसि (संस्कृतमाश्रित्य)

१—'हु' पौलोफ उपर चदाओल छैक । पौलोफे 'हि' लिखल छैक ।

२—ई अक्षरवम संस्कृत धूर्तसमागम नाचमे छैक ।

३—ई अक्षरवम संस्कृत बोधीमे नहि छैक ।

पक्काः कुन्तलाराज्यः कटकटाचासो कपोलायुमा-  
वेतस्याः स्तनमण्डलं निपतितं शुष्का नितम्बस्तटी ।  
दक्ष्णान्तरिमतमाखि(पि१)तेः शिवशिव प्रस्तौति नेत्रोत्सवं  
ब्रूमः किं किं [१६क]करवाग वेदि<sup>१</sup>किमिचं दुष्टा जरथापला ॥

॥ करि(लि?)त रागे ॥ पक्ष्वालीजले ॥

चल चल चलम्भा विफ(१क)लं तजो  
सिचा<sup>२</sup>पहु बोलसि मसबासि राजी ॥धुर्वं॥  
माल पयकि लुधि मेसओक आ ।  
तहअओ न छाइसि अपनु कि मथा - ॥  
भुपलि किछिनि सन सोइर बान -  
कके विहुसि<sup>३</sup> दहि लेसि परान ॥  
पहअ पयोधर पाफल बार  
सिव-सिव कत करव अनविकार - ।  
कविशेपर जोतिक एहु गाव  
राए हरसिंह पुकए रस साव ॥१२॥

१—ई छपओ अक्षर संस्कृत बोधीमे छैक ।

२—एदिठाम इकार जुलैक ने कादल छैक ।

३—आवः एकरा 'यो' बनाए शुद्ध कएल छैक ।



विश्वनगरः (स्नातकं प्रति) — किमसाधुजनोचितं पलपति ।  
(सुरतप्रियां प्रति) शुभे गम्यतां पाकशालां प्रति यय-  
[१६ ख] मप्यागच्छन्त एवास्महे .

सुरतप्रिया — जं मअवं आणवेदि<sup>१</sup>

(इति निष्क्रान्ती<sup>२</sup>)

स्नातकः — मअवं जाव भिक्षा सिज्जदि ताव (१०००) ।  
ज्जेव मअवं डिठ्ठु अहं उण अण्णसेविआए  
पउत्ति जाणिअ लहुं आगच्छामि

विश्वनगरः — वत्स सहैव गम्यतां<sup>३</sup>

(इत्युभौ परिक्रामतः)

स्नातकः — मअवं भूलशासअणाविदस्स मेहसपिण्णायो अण्णं-  
सेणिआए भवणं ति । मए सुदं ता वस्स  
ज्जेव अ(णु<sup>४</sup>)सारेण अणेसस्मि (अमतोवलीकथ . )

१ — एहिठाम 'रिष' लिखि कए कावल छैक ।

२ — संस्कृत पोथीमे 'निष्क्रान्ता' पाठ छैक ।

३ — आदर्शमे सन्धि कएल छैक 'मि' ।

४ — ई अक्षरसम संस्कृत पोथीमे छैक ।

मो मअवं पेक्ख<sup>१</sup> पेक्ख । पूसा अण्णसेणा वार-  
विलासिणी विलोडि(अ<sup>२</sup>)दि

विश्वनगरः — तदागच्छाग्रतः एवैतामुसर्पवि

( इत्येकान्ते स्थती । )

( ततः प्रविशति अनङ्गसेना ॥ . )

[१७क<sup>३</sup>] मालवरागे . ॥ एकवालोवाले . ॥

कत न कलावति नारि रे आ . ।  
अत सुविह नित रूप वटोरि रे आ . ॥ ध्रुवं . ॥  
मवे मरीर मोर रे आ . ।  
तथिहि सहस मुखमण्डल मोर रे आ . ॥  
कनक वराधर वदसि रे आ .  
कनकनगडाह उगल ससि जनि रे आ . ॥  
अनङ्गसेना तखु देखि रे आ  
मुमुध भगव प(र१)लोक उपेखि रे या ॥

१ — एहिठाम '२' मात्र लिखल छैक तेँ दोसर 'पेक्ख' जोत्रल अछि ।

२ — संस्कृत-धूर्तसमागमक ई पाठ थिक । प्रायः 'इ' हुक स्थानमे  
'क' मात्र पाठ छलैक ।

३ — एहि पद्यमे तीनघ पंक्ति छैक ।



कविशेषर एहु मण रे या  
हरि पय भगत गणेशर जान रे आ ॥१३॥

[१७ख<sup>१</sup>] स्नातकः (सहसोपसृत्य) — मन्त्रं पेश्य अण्डसं  
लावण्यलक्ष्मि

खीलाभोरुहपक्षकन्तश्रया सम्पूर्णचन्द्राणया  
उत्तुङ्गत्यणमारपङ्गरतणु वेहव्य मञ्जुकिसा  
बाला मत्तगइन्दमन्दगमया सुन्दरसोदामइ  
नूनं पञ्चसरस्स मोहनलदा सिङ्गारसज्जीवनी

विश्वनगरः (स्वगत - ) —

यन्नेत्राश्रलभजिलज्जिममयस्मेराननाभोरुहा  
यत्ने क्रीतविलासहासवसतिर्यत्कण्ठरोमोद्गमा  
यद्भावेज्जि[१८क]तलङ्गता तरलतामालोक्य गोपा  
प्रापस्तत् कथयत्पनङ्गरचनामङ्गे कुशाङ्गी रि

(प्रकारः)

वत्स सम्यगुपलक्षितं तथा हि ।

१—एहि पद्यमे-तीनिए पाँती लोक-छेक ।

यत्तीर्थाभ्युमुखाभ्युजासवरसो नेत्रे नवेन्दीधरे  
दन्तश्रेणिनखास्ताक्षतचयो दूर्वा च रोभावली ।  
उत्तुङ्गं च कुचद्वयं फलयुगं पात्रं (त्राकु<sup>१</sup>) कराम्भोरुहं  
तन्मन्ये मदनार्चनाहितमतिः साङ्गोपहारैरिव ॥

(अनङ्गसेनां लक्ष्मीकृत्य)

यत्पूर्वं रचितं तपः प्रतिदिनं या तीर्थयात्रा कृता  
यज्जुआ पुरुषोत्तमार्चनविधौ चेतः कृतार्थीकृतं ।  
य(१८<sup>२</sup>)स्यैतत्परमप्रसोदजनकं प्राप्तं फलं कर्मण-  
स्तत्किं शास्त्रप्रकारसेन किमहो स्वर्गेण मोक्षेण वा ॥

( इति कामायस्थां ताटयधि ॥ )

॥ बरालीसगे ॥ मन्त्राली गाले ॥

जत हरि भगति पुरुषे मन

... ..

॥ अरे हसरे तु मेला गो ॥ ध्रुवं ॥

कतइक मोखे परम सुख होइ ।

१—मन्त्र प्रक्षिप्ते ई छेक ।

२—मन्त्रपरीक्षीक पाठ ई छेक ।

३—पाँती खल्ल स छेक ।



कतह धेयौन श्रम पद देह ॥  
 की फल जपसपासहि मोरी  
 जयो भाग्योव सनिधान रोहता  
 झुपुध भगव परलोक उपेखी ।  
 करह विनति पुत्र तामरि देखी ॥  
 कविशेखर जोतिक यह भाव ॥  
 राय हरतिद बुझद रस भाव ॥ १४ ॥

॥ नादराने ॥ यतिवाली ॥

बला भरीजपुन्दरनयने - ।  
 भाषलुकपय भाषियदने - ॥ धुर्व - ॥  
 राजमराजविदितमने - ।  
 रतिपति सभ हुतवह सजने - ।  
 विशतदिकामुदुमुलपुमने - ।  
 कल्पकलायपरसकुशले - ॥  
 कायतिपकलपपौपर - ।  
 सखतपुनिजनमनजनेहरे - ।  
 विश्वनगरानिहमजनेमिने ।  
 कविशेखरजोतिक ॥ १५ ॥ मणिले ॥ १५ ॥

॥ कावसराने ॥ यतिवाली ॥

(स्वातकृत) - ॥ ॥

हरि हरि हरि न सुपडौन - ।  
 थापदि धीर अगव भेयौन - ॥ धुर्व - ॥  
 हमारि दारा कतहु जानी - ।  
 तेजहि तासु श्रुतनयक हाली - ।  
 खन एक रतिरङ्गसरङ्गे - ।  
 खाइ गोसाजी कुवतिसङ्गे - ।  
 कुलिश कठिन दण्डपदारे - ।  
 भगवचरित योविक भासा - ।  
 सुनिजे मनि मगेश हासा ॥ १६ ॥

स्वातकृत (सद्वैराग्य) ॥ (काव्यगत) - एलो लम्पलो उन्दुरुविअरे  
 भयो विअ पड्यो । मोदु । कुचिपहायोहि वययोहि  
 खिनाइस्ते (प्रकार) अकर्व तुम उपेखिदसंसार-  
 लोकयो मोखेदकपरायणो कर्ध प्रशारिसे मशति-  
 गदापरिसे पलिअ बाणाअश वावादेसि । शिख-  
 चीअदु इमादो दुहुनखिजापसक्तमादो चि ॥

१—तदनुगतोवीज पाठ ई पिक ।



विश्वनगरः [१६ख] (सावज्ञ) — रागे (१वत्स न) एवं परयसि

यावदष्टिर्मृगाचीणां नो नरीनर्ति भङ्गुरा ।  
तावज्ज्ञानवतां चित्ते विवेकः कुरुते पदं ॥

अनङ्गसेना (विहस्य) — भयं धणाधीनो × (कतु) अथं  
जगो त्रात्किं (१२व अश्वयोताकिं) एत्थ अरयणरु-  
दिअं कदुअ अप्पाणअं विलम्बे<sup>१</sup>सि

विश्वनगरः — प्रिये सन्यासिनाम<sup>१</sup>स्माकं कुतोऽर्थसम्पत्तिः ।  
तस्मच्छरीरेणैव यथासुखं विनियोगः क्रियतां ।

(सानुरागं)

बाले मृणालदलकौमलबाहुदण्डे  
चण्डे प्रसन्नवदने भयि देहि हृदि ।  
एष स्वदीयवदनावुंजकृष्टचेता  
दीनो यतिः सपदि मज्जति कामसिन्धौ ॥

(इति कामाधर्यां नाटयति)

स्नातकः — भो भयं तुमं उपेक्षितदसंसारसोक्खो (इत्यादि  
पठति)

अनङ्गसेना (संस्कृतमाश्रित्य पठति) — भगवन्मन्त्रात्पन्तालुव-  
न्धेन यतः

वागर्थं परिगृह्य मोक्षपदार्थं ध्यायन्ति निर्मत्सराः  
बालप्रौ[२०क]दकुलीनलुद्धविषये सर्वत्र साधारणाः ।  
रागद्वेषममत्त्वकर्षितधियो वेश्याः सुरा मित्रवो  
वस्तुं नन्वपि नित्यमित्यहह किं कामार्थवे मज्जसि ॥

विश्वनगरः — प्रिये गृहाणास्मच्छरीरं

(इति तां अङ्गुलीं धारयति)

स्नातकः (सहसोपसृत्य) — अरे गण्डपरलोश्वा दुष्टपरिष्वाअश्वा  
एसा अमहपरिग्रहेण तद्दह पुश्वाहु होदि

विश्वनगरः — धिङ्मूर्ख एषास्मद्भवे<sup>१</sup>धृस्वद्गुरुवत्नी मातुलुन्या  
च तत् किमेनामनुषङ्गासि

स्नातकः (सक्रोधं) — अरे (२<sup>१</sup>) इ लम्पला एवं भणन्तवस्स  
दण्डपहारेण पकमाल्लुरफलं विश्व मुण्डं (३<sup>१</sup>)  
थोत्थरं करइस्सं

१ — ई संस्कृत पोथीक पाठ थिक ।



(इत्यन्येन्यं कलहं कृत्वा)

अनक्रसेना (स्वगतं) — कः धुराहृत्यपलिदम्हि । भोदु एवं  
ताव (प्रकाशितं) (प्रकाशं) भो महामाअधेश्या  
तुमं एअरि महांविवादे असज्जादमिस्सो  
पमाणीकरीअदु  
विश्वनागरः — प्रिये एवं भव

स्नातकः — पिए दहटक्कआमए दा[२०ख]दब्बा ता तं मेण्हि-  
अ मह मखोवं संपादेहि ।

(इतिदिशं दर्शयति)

विश्वनागरः — अलं दर्शनागच्छाव ।

(इतिवेष्कान्ताः सर्वे)

वमोऽङ्कः ॥

महोपाध्यायः (१२) महोपाध्यायः (१२) महोपाध्यायः (१२)  
महोपाध्यायः (१२) महोपाध्यायः (१२) महोपाध्यायः (१२)  
(वतः प्रविशति असज्जातिमिश्रो विदूषकश्च ॥)  
शालङ्कीरागे ॥ यत्किं प्रिताले ॥  
आगम वेद किछु किछु जानिअ ।  
परक विच धन्धि घर आनिअ ॥  
चलक कोटे ओ (१३) तरासह (१४) द्वा  
धोती गरुअ उम्भोस देख (१५) वे ।  
सबह चाहि वड सोति वोलाह  
अपह (१६) पजस गह के सुह बावे ॥  
असत गोलि उपसरपन  
लाइअ परके पाणिअ गारी ।  
हरि सिर गाहु विरुनि धन  
आनिअ बयाल हकारिअ दारी ॥  
भणे कविशेपर सुनहु रे ।  
लोक हे ओम्भा दरसन देवे ।  
महामन्ति जीवतु गणेश (१७) गणेश रे ।  
वीस वीस भणे कवे ॥ १७ ॥



असज्जातिः (सप्रभोदः) ॥

त्रैलोक्ये भोजनं श्रेष्ठं ततोपि सुरतो[२१क]त्सवः ।  
भोजनं वास्तु वा वास्तु जीवनं न रतं विना ॥

वत्स वन्धुवञ्चक आगच्छ अधीश्व

विदूषकः—यं मिस्सो आणवेदि

असज्जातिः—

यदामाप्रक्तपानं यदलसनयनालोकने केलिरङ्गे  
तस्मादप्यङ्गसङ्गः कुचकलससमुत्पीडने बाहुभङ्गिः ।  
एतत्संसारसारं कुरु निजहृदये निर्विकल्पैककल्पं  
किन्ते कार्यं विवादकथितमतिश्रुतग्रन्थकन्याभरेण ॥

विदूषकः—भो मिस्स पराङ्गणासंभोगादो पि परमन्दिरे सन्धि  
कल्पिअ जं अत्थो हरीअदि तं ज्जेव तिहुअणसारं  
पेक्ख

किं वाणिज्जेण कञ्जं निअधनविलयं तं कसु काऊण दुक्खं  
किम्वा कञ्जं किसीए पसुवसुणिअमाआस णिकज्जिदोए ।  
किम्बिआए फलं वा मरणसमसमुप्पणं चिन्ताउत्ताए  
एक्कं तेलोअसारं परधनहरणं जूअकीलासुहअ ॥

ता एत्थ धुत्तउरणअरे जादि[२१ख]तो तुमं गुरु  
वादिसो अहं सिस्सो संवुत्तो

असज्जातिः (सधैराग्यः) । अहो नगरेस्मिन्निरुपधिजीवनतया-  
स्मद्विधश्रोत्रियाणां स्थितिः यतः दिनाष्टतयादारभ्य  
मे कश्चिन्त्यायवादी न कपटश्राद्धप्रतिलम्भो न  
गणिकाजनात्तापः

(निपश्ये)

भो भो विज्ञायतां असज्जातिमिश्रस्य न्यायकरणार्थं  
वादिनो द्वारि वर्त्तते

असज्जातिः (विश्वनगरस्नातकौ निरीत्य स्वगतं)—कथं अनर्थान्तरं  
आपतितं (प्रकाशं) समवसागन्तुका वयं तत्रात्र  
मिचावसरः

विदूषकः—भो मिस्स एदे ज्जेव वादिणो एदेअणं विवादं  
विचारेदु मिस्सो

असज्जातिः (सहर्षं सगर्वकृत्)—आसनमुपनीयतां • भगवते



असज्जातिः—[२२६] स्नातकाय च । १३८७ १३९ ॥

(विदूषकः तथा कृत्वा सर्वानुपवेशयति ।)

असज्जातिः—कीची कः प्रत्यर्थी च ।

स्नातकः—भासाए अहं अत्थी । शीअलकरणे पथ्यर्थी भअव

असज्जातिः—न्यायवादिनः प्रथमतो निकरः पश्चाद्भाषोत्तरे  
तत्क्रियतां भाषोत्तरे

विश्वनगरः—अयमस्मत्सन्नासदण्डो निकरः

स्नातकः—एदं मे इन्दासणकोलिअं शीअरकरणे पविशीअदु

असज्जातिः (सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं गन्धमाघ्राय च)—किञ्चि-  
द्विनियुज्यते

निद्राकरं दीपविनाशहेतुं

क्षुधाकरं बुद्धिविकाशकञ्च ।

इन्द्रासनं कामकलानुकूलं  
लब्धं मया देवशादिदानीं ॥ [२३ ख]

॥ २३ ॥—इ शब्द संस्कृतपोथीमे नहि हेतु ।

विश्वनगरः—[२२७] स्नातकाय च । १३८७ १३९ ॥

स्वाधीनयौवना सुभ्रूः

सा मान्या सर्वकामिना ।

अस्माभिरिपमाक्रान्ता

मदीया तेन वल्लभा ॥

असज्जातिः (भाषां भूमौ लिखित्वा स्नातकं प्रति) स्नातक-  
उक्तं भस्विमुत्तरं कुरु ।

स्नातकः—  
मोक्षाय नमः ।

एसा पुव्वं मए दिट्ठा दाउण दशट्ठुया  
आणीदा अ मदिं दाहं मदीया येन वल्लहा ॥

(असज्जातिः उत्तरमभिलिखति)

विदुः भो मिस्त पेक्ख पेक्ख अणत्तसेणाए लावणलच्छि

॥ मअलच्छणविम्वफुरन्तमुहो

अण्णुपलचअलकेलिणिही

अण्णुपलचअलकेलिणिही

पठमोदिअचन्दकलासरिआ



असज्जातिः (अनङ्गसेनामालोच्य) — अहो निम्मीणवैदग्धी  
विधातुः तथा हि [२३क]

नीलोलसल्ललितखञ्जनमञ्जुनेत्राः  
सम्पूर्णशारदकलानिधिकास्तवक्ता ।

वाला । जगत्रितयमोहनदिव्यमूर्ति-  
र्गन्ये विभाति जगति स्मरवीरकीर्तिः ॥

भो वादिनावेषा विवादाध्यासिता अनङ्गसेना जय-  
पराजयं यावन्मध्यस्थस्थाने स्थाप्यताम् । एवंविध-  
माध्यस्थे वयमेव नृपतिव्यवस्थापिता मध्यस्थाः ।

(अनङ्गसेनामानीय स्वसन्निधानुपवेश्य तदीयकरैः)   
हृदय (१५) निधाय सभमोद)

विकचकमलकोपश्रीरियं काम्यकान्ति-  
हिमकरकरजाताच्चन्द्रकान्ताद्धि शीतः ।  
मृगमदधनसाराभोदसौरभ्यमन्यो  
हरति मदनतापं कोमलः पाणिरस्याः ॥

(अयं विचार्य पुनरुच्चैर्विहस्य)

भो वादिनावेतद्राज्यक्षेत्रे धूर्तयोरिव युवयोर्विवादः  
तथा हि

नैषा त्वदीया भवतोपि नयं  
सस्सं [२३ख] निविष्टा सुमगा मदीय ॥

स्वप्नेपि पूर्वं मयि ज्ञातकैलि-  
स्ततोपि हेतोः खलु वल्लभा मे ॥

देशापरामे ॥ एकतालीनाले ॥

तोहरि ओ नहि के सनातक भगव  
तोहरि नहि नारी ।

हमरिए हमरा लग अछ बैसलि  
परतप हलिअ विचारी ॥ ध्रुवं ॥

परुको सपने हमे अवलोकलि ।  
हमरि तेहि के न जाने ॥

हारल भगव सनातके दुहु जने  
तन्हि असजातिक थाने ॥

कविशेपर जोतिक एहु गावे  
राए<sup>१</sup> हरसिंह बुझ भाने ॥ १८ ॥

विदूषकः (अनङ्गसेनामालोच्य जनान्तिकं) । एसो मिससो बुद्धो

१-एहिठाम एकदा विचित्र एहन चिन्ह छैक जकर अर्थ नहि  
लागल ।



भअबं शिद्धयो सणादगे मिच्छारअखो ता एदाणं  
समागमं परिहरिअ । अम्हसमागमेण तुम्ह योव्वणं  
सफलं भौदु

( इत्यात्मा [२४क] नं दर्शयति )

अनङ्गसेना (सस्मितं) — कर्धं धुत्तसङ्गतए फलहलणं सम्भुत्तं

विश्वनगरः (सर्वैराग्यं) ॥

॥ कोलावराने . ॥ परिम. च(३८)वाले ॥

अरे रे सनातक तोरिहि कुमान्ति

अनङ्गसेना हां लेल असजाति ॥ ध्रुवं ॥

कतए विचार कराओल आनि

जन्हिक चरित सुन मूलनाशक जानि ।

हेरित हि हरि धन लए मेल चोर

हाथक रतन हरायल मोर . ।

कके होएवह हरि अनुरागे . ।

जोंकक आग मोतल न लागे

( कविशेपर जोतिक एहु गाव । )

राय हरसिंह बुझए रस भाव ॥ ११५ ॥

विश्वनगरः — बत्स दुराचार न हि जलौकसामञ्जे जलौका  
लगति । मूलनासकस्यापस्विचारः तदेहि सुरतप्रिया-  
स्थानं गच्छाव

( इति निष्कान्ती द्वाविति ॥ )

॥ अत्रिश्य [२४ख] पदीचेपेण मूलनाशकः ॥

॥ धनक्षीरागे ॥ एकनालीवाले ॥

हमे सूरनासक नाउ

हमे खलनाशक न ×

× × हमर × × × × ×

जीव एति दिवस परमाउ ॥ ध्रुवं . ॥

बहुल मानुस मोख लाउ

जर जाउ(आयु) मेल

कतोक थकरव साख ।

× × × निकान्दलि

आजे मुइल मोर मतार ॥

खउर बार सब हमोहि हकारए

आनल उन रे आउ ।

केतु. म्बाड (११५ख). . . . .



जनमे नष्टक जाए ।  
 मोरि न कसो हनि कति चोट रे ।  
 काति खण्डाक धारे  
 मोरि थक तीवर वसिए गेल  
 खर मोर मोख दुपाव ।  
 कटइते जोएल निरस जे अहि (जोअहि)  
 आचलि दिठ एह विवाद  
 कविशेखर जोतिक एहु गाव ए  
 राए हरसिंह बुझ साव ए ॥२०॥ [२५क]

( ॥ इति परिक्रम्य ॥ सुहृत् कीच्य प्रकाशः )

अले ले अण्णसेणिए जाणिदे तुम्ह चलिदं जं बालं  
 बालं कअमअण्णमन्दिर (कुखील) वेअणं पत्थन्ते  
 बहुबालं हमे तए (पए) आसिदे ता शंपदं पयच्छ ॥  
 अण्णधा लाअदोहाई दोइस्सं

अनङ्गसेना—मूलनाशक संपदं जेव असज्जातिमिस्सादो  
 अण्णाणो दाइस्सं ॥

विदूषकः ॥ की एसो

असज्जातिः आः कि एए भगवदगोचरः ॥ ५१५

खिन्नोष्ठनासो गलगण्डनमो  
 वामाक्षिकाणो गलितैकहस्तः ।  
 शिलीषदव्यापृतदक्षिणाङ्घ्रिः  
 स मूलनाशः किल नापितोऽसौ ॥

( मूलनाशकश्च सहस्रोपसृत्य सर्वेषां सप्रमाणमादर्शं दर्शयति ॥ )

[२५ख] असज्जातिः—मूलनाशक क्रियतामस्माक नखलोष्ठां  
 परिष्कारः ।

मूलनाशकः—भो मिस्स पठमं पयच्छ ।

असज्जातिः—मूलनाशक किमर्थं

मूलनाशकः—भो यदि त्वं पल्लिकखलन्ते । पठमं जेव  
 मल्लिशशि ता वेअणं केण प्रतिपिट्ठं

असज्जातिः—अलं परिहासेन गृह्यतामिदं

( सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं आश्रय किञ्चित्  
 त्रिनियुज्य मिश्रस्य चरणयोर्वन्धनं कृत्वा व्यापारं  
 नाटयति )